15254

* श्री *

पुराणान्तरगत्त

श्रीसरयूउत्पत्ति रहस्य

1525M

जन्म की कथा

रामायणी रामशरणदास

प्रकाशक:—

श्रीरामायणी राम मोहनीशरणजी

स्थान-श्रीफकीरे रामजी

टीकाकार—

श्री १०८ वेदान्तीजी महाराज श्रीजानकी घाट के

शिष्य वेदान्ताचार्य

पं० श्रीहरिनाम दासजी व्यास

श्रीमनीरामजी महाराज की छावनी श्रीअयोध्याजी।

फागुन पूर्णिमा सम्बत् २०२१

प्रथमबार ५००] १९६५ [मू० २५ पैसा

श्रीहनुमत् प्रेस, अयोध्या

महर्षि वाल्मीकि शोध संस्थान
15254
अयोध्या
श्रीराम दास छावनी सेवा ट्रस्ट

— : दो शब्द : —

श्री १०८ श्रीराममोहनीशरणजी महाराज रामायणी मोहल्ला रामकोट स्थान फकीरे रामजी महाराज का आपके हृदय में भाव था कि श्रीसरयूजी के जन्म की कथा सब जगह होती रहै सो आपके भाव की पूर्ती हुई जिसे आप प्रकाशन करा रहे हैं।

यद्यपि यह कथा श्रीअयोध्या महातम में है, हिन्दी न होने से सबको सुलभ न हुई किशोरी-शरणजी के कृपा के आग्रह से श्री १०८ वेदान्तीजी महाराज श्रीजानकीघाट के कृपा पात्र श्रीहरिनामदासजी महाराज वर्तमान यहां के व्यास हैं आपने इसकी टीका बड़े प्रेम से किया अक्षर में जो त्रुटि हो भक्तजन उसे सुधार कर पढ़ेंगे॥

❀ श्रीसीतारामाभ्यां नमः ❀

श्रीसरयूत्पत्ति कथा

❀ वन्दना ❀

यस्यानु कम्पां सुसमीक्षमाणा ब्रह्मादि देवाः पद मानमन्ति, विदेहजा लालित पाद पल्लवं तं राघवेन्द्रं प्रणमामि नित्यम् ॥१॥

जयति जयति सीते वल्लभा राघवस्य. सकल विघ्नहन्तृ सुखप्रदात्री जनानां। निखिल विश्व कर्त्री रक्षिका प्राणिनां या, मुनि जन कुल वन्द्यां भूमिजां तां नतोऽस्मि ॥२॥

अञ्जना नन्दनं वीरं-सीता सोक विनाशनम्। सर्वाभीष्ट प्रदातारं मारुतिं प्रणमाम्यहम् ॥३॥

अखिल सन्तजनैर्वद्यम्, मोह मूलापवारकम्। पूर्ण ज्ञान प्रदातारं सद्गुरु प्रणमाम्यहम् ॥४॥

मू० श्रीपार्वत्युवाच—देव देव महादेव भक्तानुग्रह कारक। ब्रूहि कोऽत्र सरय्वाश्च उत्पत्तिं मम साम्प्रतम् ॥१॥

अर्थ—श्रीपार्वतीजी बोलीं कि हे देवों के भी देव श्रीमहादेवजी ! भक्तों के ऊपर अनुग्रह करने वाले, कृपा करके श्रीसरयूजी के उत्पत्ति की कथा इस समय मेरे समक्ष कहैं ॥१॥

मू०-एते वै मुनयः सर्वे नाना देश निवासिनः, उत्कण्ठते कथां श्रोतुं त्वत्तः सरयुसंभवाम् ॥२॥

अर्थ—अनेक देशों में निवास करने वाले ए सब मुनि गण आपके मुखसे श्रीसरयूजी के उत्पत्ति की कथा सुनने की अभिलाषा करतेहैं ॥२॥

मू०--श्रीशंकर उवाच—सरयू स्वमुखेनैव स्वा-मुत्पत्ति मुवाचह । तामहं कथयिष्यामि या श्रुता पुरवासिभिः ॥३॥

अर्थ—श्रीसरयूजी ने अपने उत्पत्ति का बर्णन स्वयं अपने मुख से किया है और पुरवासियों ने जिसको श्रवण किया है उसी कथा को मैं कहूँगा ॥३॥

मू०--एकदा रामचन्द्रस्तु बाल रूपी सुकौतुकी, सखीभिर्भ्रातृभिःसार्द्धं दुर्ग द्वारे च क्रीडति ॥४॥

अर्थ—एक समय अपने महल के द्वार पर परम क्रीडा कुशल बालकरूप श्रीरामचन्द्रजी अपने सखाओं और भाइयों के साथ खेलते थे ॥४॥

मू०--वृषस्कन्धः सखा कश्चिच्चत्तस्यकंधे रुरोहवै । तथा भरत शत्रुघ्नौ लक्ष्मणश्च निजान् सखीन्॥५

अर्थ – वृषस्कन्ध नाम का कोई सखा था उसके कन्धे पर श्रीरामजी चढ़ गए और श्रीलक्ष्मण कुमारजी तथा श्रीभरतलालजी एवं श्रीशत्रुघ्न-कुमारजी अपने २ सखाओं के कन्धे पर चढ़ गए ॥५॥

मू०-चामरै र्वीज्य माना श्च तथा बालैः समन्ततः।
अलकैः कम्पमानैश्च मुखस्योपरि शोभिताः ॥६॥

अर्थ – बालक बृन्द चारों तरफ से चवँर डुला रहे थे तथा हिलती हुई अलकैं मुखपर शोभित हो रहीं थीं ॥६॥

मू०--यंत्रै र्मंत्रै स्तथामात्यै रक्षितः प्रभुरीश्वरः।
अंगेऽङ्गे तथा दिव्यं भूषणं विदधत्प्रभुः ॥७॥

अर्थ – ईश्वर प्रभु रामजी यन्त्र मन्त्र एवं मन्त्रियों से सुरक्षित थे प्रत्येक अंगों में दिव्य भूषणों को धारण किये हुए थे ॥७॥

मू०--दिव्य गंधानु लिप्ताङ्गो राजराजेश्वरात्मजः।
सखिस्कन्ध गतो रामो भ्रातृभि र्द्वारि निर्ययौ॥८॥

अर्थ – राज राजेश्वर श्रीचक्रवर्तीन्द्रकुमार श्रीरामजी दिव्य गन्धों का अंग राग लगाए हुए सखा के कन्धे पर बैठकर भ्राताओं के सहित द्वार पर आए ॥८॥

मू०-शिरसा धारयन रामःस्वर्ण सूत्रस्य पट्टिकाम्।
कञ्चुकं च महद्दिव्यं स्वर्ण सूत्रेण शीलितम् ॥९॥

अर्थ – श्रीरामजी शिर में स्वर्ण सूत्र की कलंगी और स्वर्ण सूत्र से सिला हुआ महा दिव्य कञ्चुक बस्त्र अंग में धारण किए थे ॥९॥

मू०--द्वारदेशं विनिर्गत्य रामो राजीव लोचनः।
तथा भरत शत्रुघ्नौ लक्ष्मणश्च महामतिः॥१०॥

अर्थ—कमल दल के समान नेत्र वाले श्रीरामजी तथा श्रीभरतजी श्रीशत्रुघ्नजी एवं महामति श्रीलक्ष्मणकुमारजी द्वार में आकर ॥१०॥

मू०--तथा वेषेण ते बालाः क्रीडां चक्रुर्म नोरमाम्।
शतशो नागरास्तत्र रामं दृष्ट्वा मुदं ययुः॥११॥

अर्थ—सुन्दर वेष से विभूषित सभी बालक मनको हरण करने वाली क्रीड़ा करने लगे उस समय सैकड़ों नगर वासी जन श्रीरामजी का दर्शन प्राप्त करके परमानन्द को प्राप्त हुए ॥११॥

मू०-ज्येष्ठ मासस्य पूर्णायाँ राजा दशरथो नदीम्।
राम निर्गमनात्पूर्वं सरयूं स्नातु मागतः॥१२॥

अर्थ—उस दिन ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा थी श्रीरामजी के बाहर आनेसे पूर्व श्रीदशरथजी महाराज सरयू स्नान करने के लिए गए थे ॥१२

मू०--रघुनाथः सखीनाह क्वचास्ति जनको मम्।
तत्र सर्वे वयं शीघ्रं व्रजिष्यामोऽद्य माचिरम्॥१३

अर्थ—श्रीरामभद्रजी सखाओं से बोले कि मेरे पिताजी कहां पर हैं हम सबलोग अभी शीघ्र वहां पर चलेंगे विलम्ब नहीं करना चाहिए ॥१३॥

मू०--वेत्रधरा ऊचुः—स्नानार्थं तु गतो राजा ह्यधुना सरयूं नदीम्। श्रीमद्भिस्तत्र गन्तव्यं नैव दूरेऽति वर्तते॥१४॥

अर्थ—वेत्रधारी सेवक बोले कि इस समय महाराज स्नान करने के लिए श्रीसरयूजी गए हैं यहां से दूर है अतः आपलोगों को वहाँ नहीं जाना चाहिए ॥१४॥

मू०-इति वाक्यं तु तेषां वै रामः श्रुत्वा च बालवत्।
हास्यं कृत्वा मुहुश्चोच्चै र्गच्छ गच्छेति चाब्रवीत्॥१५

अर्थ—इस प्रकार उन चोपदारों के बचन को सुनकर श्रीरामजी बाल स्वभाव से बारम्बार हँसकर जोरसे बोले कि जाओ ! जाओ ॥ ५॥

मू०--ताडयामास तं पद्भ्याम् यस्य स्कन्धे च तस्थिवान्। अधावत् सोऽपि वेगेन वालैः सार्द्धं महामतिः ॥१६॥

अर्थ—जिसके कन्धे पर श्रीरामजी बैठे थे उसको वेग से चलने के लिए चरणों से इसारा किया वह महा बुद्धिमान् सखा संकेत पाकर बालकों के सहित दौड़ता हुआ चल दिया ॥१६॥

मू०--सरयूं प्रतिते सर्वे वालास्तूर्णं प्रतस्थिरे।
मार्गे तत्र नरा नार्यो दृष्ट्वा सर्वे मुदं ययुः ॥१७॥

अर्थ—श्रीसरयूजी के लिए सब बालक बहुत जल्दी प्रस्थान किए मार्ग में सभी स्त्री पुरुष दर्शन कर परमानन्द को प्राप्त हुए ॥१७॥

मूल-राजापि सरयूतीरे कृत्वा संध्या जपादिकम्।
गतुं चक्रे मनः स्तावद्बशिष्ठादिभि रन्वितः॥१८

अर्थ—बशिष्ठादि मसर्षियों के सहित श्रीचक्रवर्तीजी महाराज भी सरयू तट में सन्ध्या जपादि करके चलने की इच्छा किए ॥१८॥

मू०--चारा आगत्य वेगेन रामागमन मब्रुवन्।
क्षणं तस्थौ तदा राजा रामागमन हर्षितः॥१६॥

अर्थ—उसी समय दूतों ने वेग से आकर श्रीरामजी का आगमन सुनाया, श्रीरामजी का आगमन सुनकर महाराज अत्यन्त हर्षित होकर एक क्षण वहीं पर ठहर गए ॥१६॥

मू०--बालाः सर्वे समाजग्मुः शतशोथ सहस्रशः।
चतुराणां चतुर्णां तु क्षत्वारश्चतुरै सहः॥२०॥

अर्थ—चतुरों में भी परम चतुर चारों भ्राताओं के सहित हजारों बालक आ गए ॥२०॥

मू०--बालकै स्ते कुमारास्तु भूपते र्निकटं ययुः।
प्रोत्तीर्य च वयस्यानां स्कंधेभ्यो बालकास्तथा॥२१

अर्थ—सखाओं के कन्धे से उतर कर बालकों के सहित चारों राजकुमार महाराज के पास आ गए ॥२१॥

मू०-नृपस्य निकटे तस्थुः रामोऽङ्के पितुराविशत्।
कुथे परम विस्तीर्णे स्वर्ण सुत्रेण रञ्जिते॥२२॥
निवेश्य बालकान् सर्वान् रामं प्राह नृपोत्तमः।
दण्डवत क्रियातां वत्स वाशिष्ठ्यै तु पुनःपुनः॥२३

अर्थ—महाराज के समीप सब खड़े हो गए और श्रीरामजी पिताजी की गोद में बैठ गए तब स्वर्ण सूत्र से शोभित अति विस्तृत कम्बल में सब बालकों को बैठाकर राज राजेन्द्र श्रीचक्रवर्तीजी श्रीरामजी से

कहें कि हे वत्स ! वशिष्ठ तनया श्रीसरयूजी को बारम्बार दण्डवत् प्रणाम करो ॥२३॥

मू०--नरेशस्य वचः श्रुत्वा बालाः सर्वे नदीं प्रति ।
साष्टांग प्रणतिं चक्रुः प्रेम्णा रामादयोऽर्भकाः॥ २४।

अर्थ—श्रीमहाराज के बचन को सुनकर श्रीरामजी आदिक सब बालक बड़े प्रेम से श्रीसरयूजी को साष्टाङ्ग प्रणाम किए ॥२४॥

मू०--पुनर्निवेश्यतानग्रे कृत्वा च कर कुड्मलम् ।
जगाद सरयूँ राजा सर्वेषां चैव शृण्वताम् ॥ २५॥

अर्थ—फिर उन सबको सामने बैठाकर सबके सुनते हुए हांथ जोड़ कर राजा श्रीसरयूजी से प्रार्थना करने लगे ॥२५॥

मू० राजोवाच—नमस्ते सरयू देवि वशिष्ठ तनये शुभे। ब्रह्मादि सकलैर्देवै ऋषिभि र्नार-दादिभिः ॥२६॥
मू०--सदात्वं सेविता देवि तथा सुकृतिभिर्नरैः ।
मानसाच्चसमायाते जगतां पापतारिणि॥ २७॥

अर्थ—राजा बोले कि हे देवि ! मंगल स्वरूपे बशिष्ठ नन्दिनि आपको नमस्कार है, आप ब्रह्मादिक सम्पूर्ण देवताओं से तथा नार-दादि महर्षियों से एवं पुण्यात्मा जनों से सदा सेवित हैं, हे देवि ! मान सरोवर से आपका आगमन हुआ है आप संसार के पापों का नाश करने वाली हैं ॥२७॥

मू०--स्मरतां यश्यतां देवि, पापनाशे यटीयसि ।
ये पिवन्ति जलं देवि त्वदीयं गत मत्सराः ॥२८॥
स्तन पानं तेन मातुः करिष्यन्ति कदाचन ।
मनुप्रभृतिभिर्मान्ये मानिताऽसि सदा शुभे ॥२९॥

अर्थ—स्मरण और दर्शन करने वालों के पापों को नाश करने में परम कुशल हे देवि ! जो लोग मत्सरता को छोड़कर आपके जल को पियेंगे वे प्राणी पुनः जन्म लेकर माता के स्तन का पान कभी नहीं करैंगे अर्थात् मुक्त हो जायँगे हे मंगल स्वरूपे ! माननीय मनु प्रभुतियों से सदा आप सम्मानित पूजित हैं ॥२८॥२९॥

मू०--त्वत्तीर मरणेनैव त्वन्नाम रटनेन च ।
ये त्यजन्ति तनुँ देवि ते कृतार्था न संशयः॥३०।

अर्थ—हे देवि ! जो जन आपका नाम रटन करते हैं या आपके तट में शरीर त्याग करते हैं वे कृत कृत्य हैं इसमें सन्देह नहीं ॥३०॥

मू०-त्वं तु नेत्रोद्भवा देवि हरे र्नारायणस्यहि ।
महिमा तव देवैश्च गीयते च मुहुर्मुहुः ॥३१॥

अर्थ— हे देवि ! आप भगवान् नारायण के नेत्रों से उत्पन्न हुई हैं आपकी महिमा का गान देवगण बारम्बार करते हैं ॥३१॥

मू०-तत्र काहि मनः शक्तिः स्तवने मानुषस्य च ।
त्वत्तीरे सर्व तीर्थानि निवसन्ति चतुर्युगे ॥३२॥

अर्थ—संसार में किस मनुष्य की मानसी शक्ति है जो आपकीस्तुति कर सकै आपके तटमें सम्पूर्ण तीर्थ चारों युग में निवास करते हैं॥३२॥

मू०-नमो देवि नमो देवि पुनरेव नमो नमः।
हे वाशिष्ठि महाभागे प्रणतं रक्ष बन्धनात्॥३३

अर्थ—हे देवि! आपको नमस्कार है हे देवि! आपको नमस्कार है! बारम्बार नमस्कार, हे महा भागे वशिष्ठ नन्दिनि! शरणागत की बन्धन से रक्षा करैं॥३३॥

मू०-इमे बालस्त्वदीयाश्च वर्तन्ते शरणं तव।
एते रक्ष्याश्च पोष्याश्च तटे देवि सदात्मनः॥३४

अर्थ-ये सब बालक आपके हैं और आपके शरण में हैं अपने तट में इनकी रक्षा और पोषण करैं॥३४॥

मू०-नद्यष्टकं विधायाथ पुत्राणा मुदयाय च।
स्वर्ण लक्षं च विप्रेभ्यः पुत्र हस्तै रदापयत॥३५

अर्थ—इस प्रकार स्तुति करके बालकों के कल्याण के लिए पुत्रों के हाथ से एक लक्ष असरफी ब्राह्मणों को दान कराया॥३५॥

मू०-राज्ञःस्तवं समाकर्ण सरयूः कामरूपिणी।
दर्शनार्थं कुमाराणा माजगाम तटे पुनः॥३६॥

अर्थ—श्रीमहाराज की प्राथना सुनकर इच्छानुसार रूप धारण करने वाली श्रीसरयूजी राजकुमारों के दर्शनार्थ तीर में आईं॥३६॥

मू०-सर्वांगेषु दधाना सा भूषणानि मनोहरा।
आगत्य निकटे तस्थौ बालानां सन्मुखे सरित्।३७

अर्थ सम्पूर्ण अंग में मनोहर भूषणों को धारण किए हुए श्रीसरयूजी बालकों के समीप में आकर सामने खड़ी हो गईं॥३७॥

मू०-जग्राह चरणौ तस्या बालैः सह नरेश्वरः।
आशिषः सरयूर्दत्वा राममङ्के न्यवेशयत् ॥३८।

अर्थ – बालकों के सहित महाराज उनके चरणों का स्पर्श किए उसके बाद श्रीसरयूजी आशीष देकर श्रीरामजी को गोद में बैठालीं॥३८।

मू०-मुक्ता मालां तु रामस्य ददौ कण्ठे स्वयं मुदा
घ्राणं चकार मूर्ध्नः स्तु प्रेम्णा सा सरयूनदी ॥३९।

अर्थ-श्रीसरयूजी श्रीरामभद्रजी के कण्ठ में स्वयं आनन्द युक्त होकर मोती की माला पहनाईं और प्रेमसे शिर को शूंघीं। आघ्राण किए) ॥३९॥

मू०-भूपतिं जगदे सातु शृणु राजन् वचो मम।
इमे च बालका इष्टाः सर्वेषा मण्डगोलके ॥४०

अर्थ-श्रीसरयूजी बोलीं कि राजन्! मेरे बचनों को सुनिए ये आपके राजकुमार सम्पूर्ण ब्राह्माण्ड के प्राणियों के इष्ट देव हैं ॥४०॥

मू०-वसन्ति मम कुक्षौ हि पश्यतां ज्ञान चक्षुषा।
त्वया कृत मिदं यस्तु ह्यष्टकं च पठेन्मम ॥४१।
स्नानस्य सर्व तीर्थानां फलमाप्नोति मानवः॥
उक्त्वैवं दर्शयामास रामादीन निज कुक्षिगान्।४२

अर्थ-आप ज्ञान दृष्टि से देखिए ये सब मेरे उदर में नित्य बास करते हैं। आपके द्वारा किये हुए इस मेरे अष्टक का जो मनुष्य पाठ करेंगे उनको सम्पूर्ण तीर्थों के स्नान करने का फल प्राप्त होगा॥ इस प्रकार कह कर श्रीसरयूजी ने अपने उदर में स्थित बालकों को दिखाया ॥४१॥४२॥

मू० दृष्ट्वा दशरथो राजा विस्मयं परमं गतः।
पप्रच्छतां प्रणम्यादौ कदोत्पन्ना सरिद्वरे ॥४३॥

अर्थ—श्रीदशरथजी महाराज उनके उदर में बालकों को देखकर बड़े आश्चर्य में डूब गए और प्रणाम करके पूंछने लगे कि हे सरिद्वरे! आप कब उत्पन्न हुई हैं ॥४३॥

मू०—वशिष्ठेन समानीता मनो वैवस्वतांतरे।
वाशिष्ठीति समाख्याता पुत्रा मे ह्युदरे धृताः॥४४
कथ्यतामिति मे पृष्टं स्वमुखे नैव हे नदि।

अर्थ—वैवस्वत मन्वन्तर में आपको श्रीवशिष्ठजी लाए हैं इसी से आपका नाम वाशिष्ठी हुआ है और मेरे पुत्रों को उदर में आप धारण किए हैं इसका वर्णन अपने मुख से कीजिए ॥४४॥

मू०-श्रीशंकर उवाच—उवाच सरयूर्भूपं
वाचा गंभीरया नदी। श्रूयतां राजशार्दूल
ह्युत्पत्तिं कथयामिते ॥ ४५ ॥

अर्थ—श्रीशंकरजी बोले कि हे पार्वती! श्रीमहाराज के इस प्रकार प्रश्न करने पर श्रीसरयूजी गम्भीर वाणी से बोलीं कि हे राजराजेन्द्र! मैं अपनी उत्पत्ति कहती हूं आप सुनिए ॥४५॥

मू०-सृष्ट्यादौ तु यदा ब्रह्मा पद्मनाभस्य नाभितः।
उत्पन्नो विष्णुना ज्ञप्तस्तवसाराधयेतिमाम् ॥४६

अर्थ—सृष्टि के आदि में जब भगवान् के नाभी से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए तब भगवान् विष्णु ने कहा कि तपस्या से मेरी आराधना करैं॥४६॥

मूल- तदा धाता तपः कर्तुं मनश्चक्रे निजासने।
दिव्याब्दानां सहस्रं च कुम्भकेन व्यवस्थितः ।४७

अर्थ— तब भगवान् के आदेशानुसार ब्रह्माजी तप करने का मनमें निश्चय करके दिव्य हजार बर्ष तक कुम्भक लगाकर बैठे रह गए ॥४७॥

मू०-ध्यायन् भगवतो रूपं कोटि मन्मथ सुन्दरम्।
विदेशे वर्तमानं तं विज्ञाय कमलापतिः ॥४८॥

अर्थ—करोड़ों कामदेव से भी सुन्दर भगवान् के रूप का ध्यान श्रीब्रह्माजी करते थे, लक्ष्मीपति भगवान् अपने आदेश में स्थित ब्रह्माजी को जानकर ॥४८॥

मू०-आरुह्य गरुणं वेगात्रिपाल्लोकात् समागमत्
तं तदा तादृशं दृष्ट्वा ह्यात्म भक्ति परायणम् ॥४९

अर्थ- गरुड़ में चढ़कर भगवान् अपने धाम से बड़े बेग से वहां पर आए ब्रह्माजी को प्रेम में मग्न देखकर ॥४९॥

मू०-कृपया संपरीतस्तु जलं नेत्रान्मुमोचह।
पस्पर्श पाणि पद्मे न पद्मनाभोहि पद्मजम् ।५०

अर्थ—कृपा से परि पूर्ण भगवान् के नेत्रों से जल बहने लगा और अपने हस्त कमल से श्रीब्रह्माजी का स्पर्श किए ॥५०॥

मू०--स्पर्शनात्पद्म नाभस्य सुखात स प्रपितामहः।
सुशीतेनैव स्पर्शेन सो त्यजत्कुम्भकं विधिः॥५१

अर्थ—भगवान् के सुशीतल स्पर्श से आनन्द में विभोर होकर ब्रह्माजी कुम्भक को छोड़कर जग गए ॥५१॥

मू०-उन्मील्य नयने पश्यल्लोक नाथं पिता महः।
प्रणम्य दण्डवद्धेधास्तस्यापश्यच्चमाधुरीम्। ५२।

अर्थ—नेत्रों को खोलकर ब्रह्माजी सामने सर्व लोकों के नाथ भगवान् को देखे और दण्डवत् प्रणाम करके रूप माधुरी को देखने लगे ॥५२॥

मू०-पतितं विष्णु नेत्राच्च जलं जग्राह पाणिना।
कमण्डलौ तदा प्रेम्णा स्थापयामास विश्वसृट्।५३

अर्थ—भगवान् के नेत्रों से निकले हुए उस आनन्दाश्रु रूप जल को श्रीब्रह्माजी अपने हांथ से लेकर बड़े प्रेम से कमण्डल में रख लिए ॥५३॥

मू०-चतुर्भिर्वदनैर्ब्रह्मा तुष्टाव जगती पतिम।
स्तोत्रेण च प्रसन्नो भूद्वरं दत्वा जगाम सः॥५४।

अर्थ—श्रीब्रह्माजी चारों मुख से भगवान् की स्तुति किए इनके स्तुति से प्रसन्न होकर वरदान देकर भगवान् विष्णु अपने धाम को चले गए ॥५४॥

मू०-ब्रह्मापि तज्जलं ज्ञात्वा ब्रह्मद्रव मिदं शुभम्।
मनसा रचयामास मानसं हि सरश्च सः॥५५
जलस्य सरसि न्यासं तस्मिंश्चक्रे स पद्मजः।
जलस्य द्रुहिणो ज्ञात्वा माहात्म्यं परमाद्भुतम्५६

अर्थ—श्रीब्रह्माजी उस ब्रह्मद्रव शुभ जल के परम अद्भुत माहात्म्य को जानकर मनसे एक सर की रचना की उसका नाम मान सरोवर पड़ा उसी में उस जल को स्थापित कर दिए ॥५५॥५६॥

मू०-स्वयं तु जगतां सर्गे संवभूव पितामहः।
एवं वहुगते काले ययुर्मन्वन्तराणि षट् ॥५७॥

अर्थ फिर पितामह ब्रह्माजी संसार की रचना में लग गए इस प्रकार बहुत समय अर्थात् छ मन्वन्तर बीत गए ॥५७॥

मू०-सप्तमो वै श्राद्ध देवोऽयोध्यायां मभवन् मनुः।
तस्य पुत्रस्तु राजासी दिक्ष्वाकुस्तव पूर्वजः॥५८
अभवत् पृथिवीपाल स्तेनाज्ञप्तो मुनिः स्वयम्।
वशिष्ठो मानसं गत्वा नद्यर्थं भुज केशिनम् ॥५९

अर्थ—उसके बाद सातवें श्राद्धदेव मनु श्रीअयोध्याजी में हुए उनके पुत्र राजा इक्ष्वाकु हुए जो आपके पूर्वज हैं उनकी आज्ञा से श्रीवशिष्ठजी नदी के लिए मान सरोवर गए ॥५९॥

मू०--तुष्टाव संप्रसन्नो भूद्वरं ब्रूहि द्विजोत्तम।
वव्रे मुनिर्नदीं तस्मान्तेन दत्तं च नेत्रजम् ॥६०

अर्थ—मुनि श्रीवशिष्ठजी के स्तुति से प्रसन्न होकर मान सरोवर ने कहा कि हे द्विजोत्तम! बरदान मागो तब मुनि ने नदी मांगा और उसने हरि नेत्र का जल दिया ॥६०॥

मू०-जलं यन्मानसे न्यस्तं ब्रह्मणा ब्रह्मयोनिना।
नदीरूपेण साहं वै सरसस्तु विनिर्गता ॥६१॥

अर्थ-श्रीब्रह्माजी भगवान् के नेत्र से निःसृत जो जल मान सरोवर में स्थापित किया वहीं मैं नदी रूप से मान सरोवर से निकली हूं ॥६१॥

मू०-वशिष्ठः प्रययावग्रे पश्चाच्चाहं तुतस्यवै।
विष्णु नेत्र समुत्पन्ना रामं कुक्षौ विभर्म्यहम् ॥६२

अर्थ-श्रीवशिष्ठजी आगे आगे प्रस्थान किए और पीछे २ मैं चली इस प्रकार मैं विष्णु भगवान् के नेत्र से उत्पन्न हुई हूं और श्रीरामजी को अपने उदर में स्थापित किए हूं ॥६२॥

मू०-ये ध्यायन्ति सदारामं ममकुक्षि गतंनराः।
तेषां मुक्तिश्च भुक्तिश्च भविष्यति न संशयः ॥६३

अर्थ-मेरे कुक्षि में स्थित श्रीरामजी का जो सदा ध्यान करते हैं उनको भुक्ति मुक्ति दोनों अवश्य प्राप्त होगी इसमें संशय नहीं है ॥६३॥

मू०-रामं विद्धि परंब्रह्म सच्चिदानन्द मद्वयम् ॥
भक्तानां रक्षणार्थाय दुष्टानां च वधायवै।
जातस्तव गृहे राजंस्तपसा तोषितस्तव ॥६४॥

अर्थ-हे राजन्! श्रीरामजी को पर ब्रह्म अद्वितीय सच्चिदानन्दस्व रूप जानों आपकी तपस्या से प्रसन्न होकर भक्तों की रक्षा एवं दुष्टों का बध करने के लिए आपके घर में प्रगट हुए हैं ॥६४॥

मू०—श्रीशंकर उवाच विश्राव्य चात्मनो जन्मत्वन्तर्धानं हि सागता। अयोध्यावासिनः सर्वे विस्मयं लेभिरेपरम् ॥ ६५ ॥

अर्थ-श्रीशंकरजी बोले कि इस प्रकार अपने जन्म का प्रसंग सुनाकर श्रीसरयूजी अन्तर्धान हो गईं अयोध्यावासी सब अत्यन्त आश्चर्यान्वित हो गए ॥६५॥

मू०--धन्यो दशरथो राजा धन्येयं सरयू नदी ।
इति शुश्राव धर्मात्मा धार्मिकाणां शिरोमणि ।६६

अर्थ-श्रीदशरथजी महाराज धन्य हैं और धन्य है श्री सरयूजी इस प्रकार लोगों के मुख से धार्मिकों में शिरोमणि धर्मात्मा महाराज ने सुना ॥६६॥

मू०-ततो दशरथो राजा विज्ञाप्य चात्मनो गुरुम्
आजगाम गृहं ध्यायन् भाग्यं स्वं च महामतिः ६७

अर्थ-इसके बाद श्रीदशरथजी महाराज अपने गुरुदेव से आज्ञा लेकर अपने भाग्य का स्मरण करते हुए महामति अपने घर आ गए ॥६७॥

मू०-वशिष्ठेन समानीता वाशिष्ठी परिकीर्तिता
रामार्थे च समायाता रामगंगा च कथ्यते ॥६८

अर्थ-श्रीवशिष्ठजी लाए इस लिए बाशिष्ठी नाम हुआ और श्रीरामजी के लिए आई अतः राम गंगा भी कही जाती हैं ॥६८॥

मू०-मन्वन्तर सहस्रैस्तु काशीवासेन यत्फलम।
तत्फलं समवाप्नोति सरयूदर्शने कृते ॥६९॥

अर्थ-हजार मन्वन्तर तक काशी बास से जो फल होता है वह सरयूजी के दर्शन मात्र से ही प्राप्त हो जाता है ॥६९॥

मू०-प्रयागे यो नरो गत्वा माघान्द्वादशकं वसेत।
तत्फलं समवाप्नोति सरयूदर्शने कृते ॥ ७० ॥

अर्थ-प्रयाग में जाकर बारह माघ मास बास करने से जो फल मिलता है वह श्रीसरयूजी के दर्शन मात्र से प्राप्त होता है ॥७०॥

मू०-गया श्राद्धं च यः कुर्यात् पुरुषोत्तम दर्शनम्
तत्फलादधिका प्रोक्ता कलौदाशरथीपुरी ॥७१

अर्थ—गया श्राद्ध और पुरुषोत्तम भगवान् के दर्शन से जो फल मिलता है उससे अधिक कलियुग में श्रीअयोध्याजी के दर्शन मात्र से प्राप्त होता है ॥७१॥

मू०-मथुरायां कल्पमेकं वसते मानवो यदि।
तत्फलं समवाप्नोति सरयू दर्शने कृते ॥७२॥

अर्थ—मथुरा में एक कल्प बास करने का जो फल है वह श्रीसरयूजी के दर्शन मात्र से ही प्राप्त हो जाता है ॥७२॥

मू० या गति र्योग युक्तानां वराणस्यां तनु त्यजन्
सा गतिः स्नान मात्रेण सरय्वां हरिवासरे ॥७३

अर्थ—जो गति योगियों को काशी में शरीर त्यागने से होती है वह एक एकादशी को श्रीसरयूजी के स्नान मात्र से ही मिलती है ॥७३॥

मू० पुष्करे तु नरो गत्वा कार्तिक्यां कृत्तिकादिने
तत्फलं समवाप्नोति सरयू दर्शने कृते ॥७४॥
कल्प कोटि सहस्राणि ह्यवंती वासमुत्तमम्।
तत्फलं समवाप्नोति सरयू दर्शने कृते ॥७५॥

अर्थ—जो फल कृत्तिका नक्षत्र से युक्त कातिक की पूर्णिमा में पुष्कर तीर्थ में जाने से मिलता है, और जो फल करोड़ हज़ार कल्प अवन्तिका पुरी में बसने से मिलता है वह फल सरयूजी के दर्शन मात्र से मिलता है ॥७५॥

मू०-षष्टि वर्ष सहस्राणि भागीरथ्यवगाहनात्।
तत्फलं समवाप्नोति दृष्ट्वादाशरथीं पुरीम् ॥७६।

अर्थ—साठ हजार वर्ष गंगा स्नान से जो फल मिलता है वह श्रीअयोध्या पुरी के दर्शन मात्र से ही प्राप्त हो जाता है ॥७६॥

मू०-निमिषं निमिषार्धंवा प्राणिनां रामचिन्तनम्।
यत्र कुत्र स्थितो जीवोह्ययोध्यां मनसा स्मरेत् ७७
नतस्य पुनरावृत्तिः कल्पान्तर शतैरपि।
जलरूपेण ब्रह्मैव सरयू मोक्षदा सदा ॥ ७८ ॥

अर्थ—जीव जहां कहीं भी रह कर एक पल या आधा पल श्री-रामजी का चिन्तन करै और मन से श्रीअयोध्याजी का स्मरण करै उसका पुनर्जन्म नहीं होगा मोक्षदाता ब्रह्म ही सरयू जल होकर सदा विराजमान हैं ॥ ७७--७८ ॥

मू०--नैवात्र कर्मणां भोगो रामरूपो भवेन्नरः।
पशुपक्षि मृगाश्चैव त्वन्ये ये पाप योनयः।
तेपि मुक्ता दिवं यांति मम वाक्यं न संशयः।७९

अर्थ श्री अयोध्या जी में कर्म फल भोगना नहीं पड़ता, यहाँ मनुष्य श्रीरामजी के समान रूप वाला हो जाता है। पशु, पक्षी, मृग तथा अन्य पाप योनि वाले जीव भी श्री अयोध्या पुरी में मुक्त होकर साकेत धाम जाते हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥ ७९ ॥

यः पठेत् प्रयतो नित्यं सरयूद्भव कथां शुभाम्।
तस्य रामे भवेत्प्रीतिः प्राप्नुयाद्रामसन्निधिम्।८०

इति श्री स्कन्द पुराणे अयोध्या खण्डे गौरी शंकर सम्बादे श्री-अयोध्या माहात्म्ये सरयूत्पत्ति कथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ३।

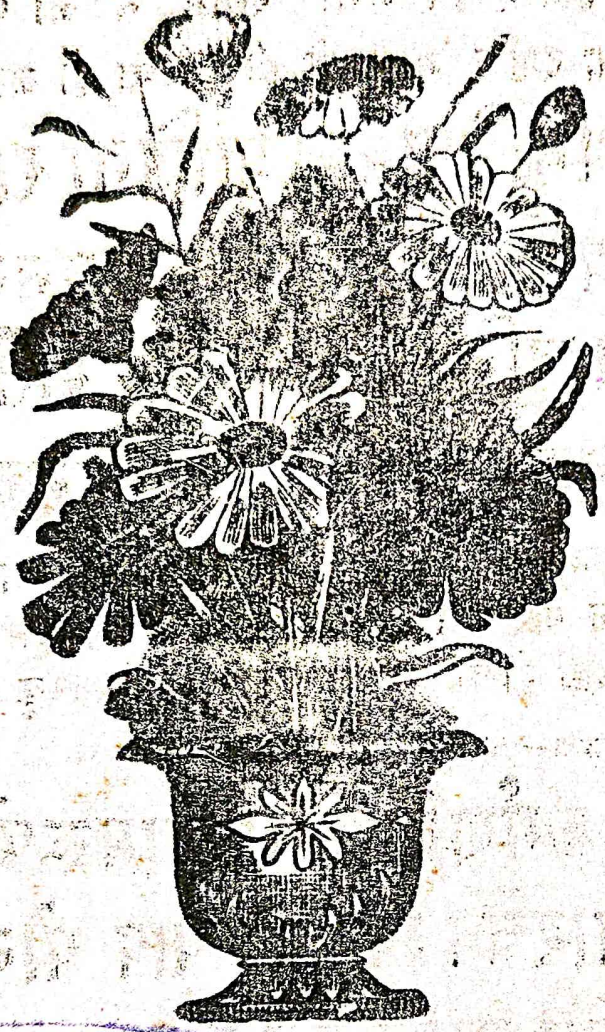

15254

हर प्रकार की पुस्तक मिलने का पता—

श्रीहनुमत् प्रेस, श्रीअयोध्याजी।